International Journal of Scientific Research in Science and Technology
Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
(www.ijsrst.com)
doi : https://doi.org/10.32628/IJSRST

संत–काव्य धारा और कबीर की कविता

डॉ0 अर्चना कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, विद्या भवन महिला महाविद्यालय, सिवान, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा।

Article Info

Publication Issue
Volume 10, Issue 1
January-February-2023

Page Number
724-730
Article History
Accepted: 01 Feb 2023
Published: 21 Feb 2023

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के अंतर्गत एक विशेष 'काव्य–धारा' जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निर्गुण 'ज्ञानाश्रयी शाखा' डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'निर्गुण–भक्ति–साहित्य' तथा डॉ. रामकुमार वर्मा ने 'संत–काव्य परम्परा' का नाम दिया है।

'संत' शब्द की व्याख्या भी विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न ढंग से की है। श्री परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है – ''सन्त' शब्द उस व्यक्ति की ओर संकेत करता है, जिसने 'सत' रूपी परमतत्व का अनुभव कर लिया हो और जो इस प्रकार अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर उसके साथ तद्रूप हो गया हो और जो सत्य स्वरूप, नित्य–सिद्ध वस्तु का साक्षात्कार कर चुका हो अथवा अपरोक्ष की उपलब्धि के फलस्वरूप अखण्ड सत्य में प्रतिष्ठित हो गया हो, वही संत है''[1] अतः ''व्यापक अर्थ में किसी भी ईश्वरोन्मुखी सज्जन पुरूष को 'सन्त' कह सकते है। .. ... और संकुचित अर्थ में केवल निगुर्णोपासकों को ही इस विशेषण से युक्त किया जाता है।''[2] स्वयं कबीरदास ने संत के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा है

बृच्छ कबहुँ नहीं फल भखै, नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारने साधुन धरा सरीर।।[3]

हिन्दी साहित्य में नामदेव, कबीरदास, रैदास, नानक, दादुदयाल, रज्जबदास, मलूकदास, सुन्दरदास, तुकाराम, एकनाथ, लालदास, धर्मदास, यारी साहब, दयाबाई, सहजोबाई इत्यादि संतकवियों के काव्य को 'संतकाव्य' कहा जाता है। संत कवियों के विचारधारा, चिन्तन, जीवन–दर्शन और काव्यों पर उपनिषद्, शंकराचार्य का अद्वैत–दर्शन, सिद्ध–नाथ–जैन मुनियों, इस्लाम धर्म तथा सूफी दर्शन का व्यापक प्रभाव है ''उपनिषदों में प्रतिपादित ब्रह्म, जीव–जगत और माया सम्बंधी विचारधारा के साथ ही ब्रह्म के स्वरूप–वर्णन से सम्बंद्ध उपमानों और अप्रस्तुत योजनाओं को संत कवियों द्वारा प्रायः उसी रूप में ग्रहण कर लिया गया है।''[4] शंकर सिद्धान्त के अनुरूप संतकवियों का मानना है कि ''जीव विशुद्ध बह्मतत्त्व है और जो भिन्नता की उपलब्धि होती है, वह माया अथवा अविद्याजनित उपलब्धि है।''[5]

सिद्धों की वैचारिक मान्यताएं एवं सिद्ध–साहित्य की अनेक प्रवृतियाँ संत साहित्य में विकसित हुई है। ''सिद्धों ने अपनी वाणियों द्वारा जाति–पॉति के भेदभाव को मिटाने का प्रयत्न किया, तत्कालीन धार्मिक आडम्बरों एवं वेद–विहित यज्ञ–अनुष्ठानों आदि का विरोध किया, सभी वर्णों एवं वर्गों के व्यक्तियों को वेदाध्ययन करने एवं साधना–उपासना करने के लिए प्रेरित किया तथा बाह्य साधना की अपेक्षा अतः साधना पर बल देते हुए इन्द्रिया–निग्रह प्राणायाम, योग–साधना आदि के महत्व

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

का प्रतिपादन किया।''[6] सिद्धों की तरह नाथ–पंथियों की साधना पद्धति में तन्त्र–मंत्र एवं योग–साधना का बहुत अधिक महत्व है। नाथ पंथियों ने हठयोग, राजयोग, ध्यानयोग इत्यादि योग साधनाओं द्वारा मोक्ष प्राप्त करने का प्रचार किया। इसी से वे योगी कहलाते है। नाथ सम्प्रदाय की गुरू परम्परा में गुरू गोरखनाथ सबसे प्रमुख योगी हुए। ''उन्होंने संयम, आसन, मुद्रा, कुंडलिनी का अर्ध्वगमन, नादानुसंधान आदि आन्तरिक साधना पर जोर देते हुए बाह्याचार का विरोध किया। इस प्रकार संत मत को पल्लवित करने में चौरासी सिद्धों एवं नव नाथों ने बड़ा ही योग प्रदान किया, क्योंकि आन्तरिक साधना की जिस पद्धति का प्रचार उक्त सिद्धों एंव नाथों ने किया, उसी को विकासित करने का कार्य संतों ने आगे चलकर किया। साथ ही वर्ग–भेद, वर्ग भेद आदि को मिटाकर सम्पूर्ण जातियों, वर्णों एवं निम्न से निम्न कोटि के व्यक्तियों के लिए उपासना, साधना एवं भक्ति को सुलभ बनाने का जो कार्य इन सिद्धों एवं नाथों ने आरम्भ किया था, वही कार्य संतों द्वारा आगे चलकर सम्पन हुआ।[7] पं0 हाजारीप्रसाद द्विवेदी ने यह प्रतिपादित किया है कि ''कबीर के निर्गुण राम नाथ योगियों के 'द्वैताद्वैत विलक्षण समत्व– ही है।''[8] ''सिद्धों और नाथों से कबीर का सम्बंध मुख्यतः पॉच स्तरों पर मान्य है (1) उच्च वर्गीय या ब्राह्मणों द्वारा अनुमोदित व्यवस्था का विरोध, (2) गुरू का महत्व, (3) पिण्ड–ब्रह्माण्ड की एकता, (4) सहज तत्व (परमतत्व) की भावना (5) भाषाशौली एवं काव्य रूप। इसमें संदेह नहीं कि उपर्युक्त सभी बातों को कबीर ने सिद्धों और नाथों से ग्रहण किया था किन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो इनमें से प्रत्येक को कबीर ने अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की छाप लगाकर नयी अर्थवता प्रदान कर दी है।''[9]

इसी प्रकार योगिन्दु, मुनि रामसिंह, देवसेन इत्यादि जैन मुनियों के उपदेशपरक मुक्तक साहित्य की अनेक विशेषताओं का प्रभाव संतकाव्य पर पाया जाता है। संतों की विचाराधारा इस्लाम धर्म ऐकश्वरवाद से प्रभावित है। अवतारवाद और मूर्तिपूजा के वाहिष्कार की अवधारणा इस्लाम धर्म में ही है। तत्कालीन समय की सबसे बड़ी आवश्यकता थी एकेश्वरवाद। अतः संत कवियों ने हिन्दू और मुसलमान दोनों को एकेश्वरवाद का संदेश दिया, जिसके परिणाम स्वरूप सामान्य जनता को बहुदेवोपासना के अभिशाप से छुटकारा मिला। इसी प्रकार ''सूफी मत ने सन्तों की विचारधारा को ही नहीं अभिव्यंजना शैली को भी प्रभावित किया। इस सम्प्रदाय ने साधनात्मक एवं भावनात्मक आदर्श संत कवियों को निरंतर प्रभावित करते रहे। सूफी मत ने देश व्यापी धार्मिक कटुता को समाप्त करके, प्रेम, सहिष्णुता, औदार्य एवं मधुरता की भावना का प्रसार किया। यह कार्य ज्ञानमार्गी संतो के साहचर्य–सहयोग से ही सम्भव हुआ।''[10]

यद्यपि संतो की विचारधारा का श्रीगणेश सिद्धों एवं नाथों की वाणियों से हो गया था। तथापि इस परम्परा का प्रारंभ महाराष्ट्र के संत नामदेव से माना जाता है। इन्होंने जॉति–पॉति का विरोध करते हुए सर्वव्यापी निर्गुण ब्रह्म की उपासना पर बल दिया। महाराष्ट्र के संत कवियों के सिद्धान्तों का प्रभाव भी हिन्दी के संत कवियों की रचनाओं में समान रूप से मिलता है। कबीर, रैदास, रज्जब, दादू, आदि संतो ने भी नामदेव का नाम बड़ी श्रद्धा से लेते हुए उनकी गणना उच्च कोटि के संतो के रूप में की है। संत काव्य परम्परा के महत्वपूर्ण कवियों में कबीर, दादूदयाल सुन्दरदास, रज्जबदास, यारीसाहब, पलटू साहब, मलूकदास, प्राणनाथ, आदि तथा प्रसिद्ध कवयित्रियों दयाबाई व सहजोबाई इत्यादि ने उत्कृष्ट कोटि की काव्य रचना की है। दादूदयाल के काव्य में ईश्वर की व्यापकता, हिन्दू–मुस्लिम एकता तथा अलौकिक प्रियतम में प्रेम और विरह का चित्रण मिलता है। सुन्दरदास इनके शिष्य थे। संत कवियों में अध्ययन और विद्धता की दृष्टि से सुन्दरदास का स्थान सबसे ऊँचा है। रज्जबदास ने लगभग पाँच हजार छन्दों की रचना की है। इन्होने ईश्वर–विषयक प्रेम की व्यंजना अनुभूतिपूर्ण शब्दों में की है। संतकाव्य धारा के प्रमुख कवियों का आविर्भाव समाज के निम्नवर्णों में हुआ था। इन कवियों के कविता का मुख्य उद्देश्य अपने विचारों का प्रचार तथा अपने आध्यात्मिक अनुभूतियों का प्रकाशन करना था। ''अतः उसमें दर्शन की शुष्कता न होकर काव्य की सी तरलता मिलती है। उनके उपदेशों में विधि और निषेध दोनों पक्षों का समन्वय हुआ है। जहाँ उन्होंने निर्गुण ईश्वर, रामनाम की महिमा सत्संगति, भक्तिभाव, परोपकार, दया, क्षमा आदि का समर्थन पूरे उत्साह से किया है, वहाँ मूर्तिपूजा, धर्म के नाम पर की जानेवाली हिंसा, तीर्थव्रत,

रोजा, नमाज, हज आदि विधि–विधानों, ब्राह्मयाम्बरों, जॉति–पॉति, भेदभाव आदि का डटकर विरोध किया है।''[11] संत कवियों की कविताओं में अलौकिक प्रेम–भाव की व्यंजना हुई है जिसे रहस्यवाद की संज्ञा दी जाती है। इन कवियों ने ''अपने अलौकिक प्रेम की व्यंजना कुछ ऐसे लौकिक रूपकों एवं प्रतीकों के माध्यम से की है, जिनसे वह पाठक की अनुभूति का विषय बन जाता है। अनुभूति की तरलता से युक्त होने के कारण वह श्रोता के हृदय को द्रवित करने में मसर्थ है।''[12] संतकवियों के प्रेम के संबंध में गणपतिचन्द्र गुप्त लिखते है कि–''इनका प्रेम शक्ति और रहस्यवाद के बीच की स्थिति से सम्बंध रखता है, जिसे हम 'प्रणय' कहना ही अधिक उचित समझते है।''[13]

संत कवियों में सबसे अधिक प्रभावशाली व्यक्तित्व कबीर का था। कबीर की वाणी सभी संत कवियों की अपेक्षा सबसे अधिक सशक्त एवं सक्षम है। ''भारतीय धर्म–साधना के इतिहास में कबीरदास ऐसे महान विचारक एवं प्रतिभाशाली महाकवि है, जिन्होने शताब्दियों की सीमा का उल्लंघन कर दीर्घ–काल तक भारतीय जनता का पथ आलोकित किया और सच्चें अर्थों में जन–जीवन का नायकत्य किया।''[14] कबीर का जन्म सन् 1399 ई0 के लगभग बनारस के लहरतारा के पास माना जाता है। जुलाहा जाति के नीरू और नीमा दम्पति ने इनका लालन–पालन किया। आगे चलकर कबीर ने भी जुलाहे के धंधे की स्वीकार किया। कबीर स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। 'भक्तमाल' में रामानन्द के प्रमुख शिष्यों का उल्लेख है जिसमें कबीर को विशिष्ट स्थान प्रदान किया गया है। रामानन्द के शिष्य कबीर के अतिरिक्त धरमदास, शेख फरीद, हरिदास, यारीसाहब, बुल्ला साहब, भीखादास, दयाबाई, सहजोबाई, सुन्दर दास आदि कितने ही संत कवि हुए है ''जिन्होंने भाव विभोर वाणियों द्वारा आध्यात्मिक साधना एवं सामाजिक अम्युत्थान के प्रति अपने–अपने विचार प्रकट किए है तथा बाहयाडम्बर, माया–मोह, कनक और कामिनी, मांसाहार, तीर्थाटन आदि का विरोध करते हुए जीवन को संयम, दया, क्षमा, संतोष, ईश्वर–विश्वास आदि से सम्पन्न बनाने का आग्रह किया है। पारस्परिक भेदभाव को दूर करने की सलाह दी है और निराकार ब्रह्म की उपासना पर जोर देते हुए मंदिर–मस्जिद के पाखण्डपूर्ण आचार–विचार का घोर विरोध किया है।''[15]

वस्तुतः कबीर का आविर्भाव जिस युग में हुआ था वह भारतीय सामन्तवाद का उत्कर्ष काल था। भारतीय इतिहास में यह समय घोर राजनीतिक और सांस्कृतिक उथल–पुथल का माना जाता है। सामान्य जनता में राजनीतिक चेतना का अभाव था। सामाजिक, साम्प्रदायिक और धार्मिक क्षेत्र में आडम्बर और भेदभाव इतना बढ़ गया था कि उसकी प्रतिक्रिया अनिवार्य हो गई थी। कबीर ही वह क्रांतिकारी कवि है जो कविता के माध्यम से डंके की चोट पर रूढ़िवादी व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठाते है। ''भारतीय संस्कृति की क्रांतिकारी चेतना के अग्रदूत बनकर कबीर अपने समय में प्रकट हुए। रामानन्द से प्राप्त 'रामनाम' के बीज–मंत्र की जितना क्रांतिकारी व्यंजना हो सकती थी, अपनी प्रखार तथा अनुभवसिद्ध वाणी से उन्होने उसे सात द्वीपों तथा नवों खण्डों तक गुंजा दिया –

भक्ति द्रविण उपजी लाए रामानन्द।
परगत किया कबीर ने सप्तद्वीप नवखण्ड।।''[16]

पं0 हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर का गम्भीर अध्ययन प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित किया कि ''कबीर के निर्णुण राम, नाथ–योगियों के 'द्वैताद्वैत विलक्षण–समत्व' ही है। आज यह निर्विवाद रूप से मान लिया गया है कि कबीर के निर्गुण संतमत का सीधा सम्बंध नाथ योगियों से है। सिद्धों नाथों से कबीर का सम्बंध मुख्यतः पाँच स्तरों पर मान्य है– (1) उच्च वर्गीय या ब्राह्मणों द्वारा अनुमोदिन व्यवस्था का विरोध (2) गुरू का महत्व (3) पिण्ड–ब्रह्मण्ड की एकता (4) सहज तत्व (परमतत्व) की भावना, (5) भाषा शैली एवं काव्य रूप। इसमें संदेह नहीं कि उपर्युक्त सभी बातों को कबीर ने सिद्धों और नाथों से ग्रहण किया था किन्तु विचारपूर्वक देखा जाय तो इनमें प्रत्येक को कबीर ने अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की छाप लगाकर नयी अर्थवता प्रदान कर दी है।[17]

संत–कवि निगुर्ण ब्रह्म में विश्वास करते है। जो सर्वव्यापी है, अजर अमर है, अगोचर है, निराकार है, निर्गुण है, शाश्वत है–

कबीर पारब्रह्म के तेज का, कैसा है उनमान।
कहिबे कौ सोभा नहीं, देखा ही परवान।।[18]

कबीर कहते है कि निर्गुण ब्रह्म का स्वरूप कैसा है? इसे समझना और समझाना दोनों ही कठीन है–

जस तूँ तस तोहि कोई न जान।
लोग कहैं सब आनहिं आन।।[19]
दसरथ सुत तिहुलोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।[20]

कबीर के काव्य में निर्गुण ब्रह्म की महत्ता प्रतिपादित की गई है। उनके अनुसार ब्रह्म का निवास स्थान मनुष्य के घट में ही है उसे बाहर खोजने जान व्यर्थ है–

हरि हिरदै अनत कत चाहौ।
भूले भ्रम दूनी कत वाहौ।।[21]

माया और भ्रमवश व्यक्ति उसे बाहर खोजता है जिस प्रकार कस्तूरी तो मृग की नाभि में वसी होती है परन्तु उसकी सुगन्ध से मतवाला बना मृग उसे खोजने के लिए दूर–दूर जंगलों में भटकता फिरता है। घासों को सूंघ–सूंघ कर उदास हो जाता है फिर भी उसे सुगन्ध का पता नहीं चल पाता है। ठीक वैसे ही व्यक्ति ईश्वर को मंदिर, मस्जिद, तीर्थ–व्रत, उपासना एवं विभिन्न प्रकार के विधि–विधानों में खोजता है परन्तु ईश्वर तो मनुष्य के भीतर ही वसे है। उसे वह देख नहीं पाता–

कस्तूरी कुन्डलि वसै मृग ढूढै वन माहि।
ऐसे घटि घटि राम है, दुनियॉ देखौ नाहि।।[22]

पुस्तक ज्ञान, तथा अनेक प्रकार के विधि–विधानों के विरोध की प्रवृति नाथ–जैन साहित्य की तरह कबीर के काव्यों में भी प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त है। नाथों के गुरू गोरखनाथ कहते है –

पढ़ि पढ़ि केता मुवा कथि–कथि कथि कहा कीन्ह।
बढ़ि बढ़ि बढ़ि बहु घट गया पारब्रह्म नहीं चीन्ह।।[23]

जैन मुनिराम सिंह कहते है कि – ''बहुत पढ़ा जिससे तालू सूख गया,
पर मूर्ख ही रहा। उस एक ही अक्षर को पढ़ जिससे शिवपुरी का गमन हो–
वहुयइं पढ़ियइ मूढ पर तालू सुक्कई जेण।
एक्कु जि अक्खरू तं पढ़तु सिवपुरि गम्मइ जेन।।[24]

कबीर कहते है–

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोई।
एकै आखर प्रेम कै, पढ़ै सो पंडित होई।।[25]

संत काव्यों में गुरू को अत्यधिक महत्व प्रदान किया गया है। कबीर की दृष्टि में गुरू 'गोविन्द' से भी बढ़कर है क्योंकि 'हरि रूठै गुरू ठौर है, गुरू रूठे नहीं ठौर' कहकर कबीर ने गुरू को सबसे बड़ा आश्रय स्थान माना है। जो ईश्वर के रूठने पर भी भक्त की रक्षा करता है। तंत्र और योग–साधना में गुरू का महत्व अत्यधिक था क्योंकि दोनों धर्म–साधनाएं गूढ़ शारीरिक

क्रियाओं को महत्व देती थी, जिनमे गुरू की आवश्यकता पग–पग पर अनुभव की जाती थी। सिद्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि सिद्धों ने गुरू ज्ञान को महत्व देते हुए शास्त्र–ज्ञान को मरूभूमि के समान वताया है जिसमें भटक–भटक कर वे जल के अभाव में प्यासे रह जाते थे गुरू उपदेश उनके लिए अमृत था। सिद्ध सरहपा ने कहा है–

गुरू उवएसे अमिय रसु, धाव ण पीअउ जेहि।
बहु सत्थत्थ मरूत्थलहि, तिसिए मरिअउ तेहि।।[26]

गोरखनाथ ने 'प्राण संकली' में गुरू को 'आत्मब्रह्म' लक्षित कराने वाला कहा है –

प्रथमें प्रणऊ गुरू के पाया, जिन मोहि आत्म ब्रह्म लषाया।[27]

कबीर गुरू के महत्व को बताते हुए कहते है –

गुरू गोविन्द तौ एक है, दूजा सब आकार।
आपा मेटै हरि भजै, तब पावै दीदार।।[28]
कबीर पीछे लागा जाइ था, लोक वेद के साथ।
आगै थैं सतुगुरू मिल्या, दीपक दीया हाथि।।[29]

सभी संत कवियों ने समाजिक समानता पर बल दिया है। इन्होंने जातिगत और वर्णगत भेदभाव को अस्वीकार किया है। जाति–पाति, ऊच–नीच, व छुआछूत का विरोध किया है। कवि नामदेव ब्राह्मण और शूद्र के भेद को व्यर्थ सिद्ध करते हुए कहते है–

नाना वर्ण गवा उनका एक वर्ण दूध।
तुम कहाँ के ब्रह्मन हम कहाँ के सूद।।[30]

कबीर इससे भी तीखे स्वर में कहते है–

एक बूंद एकै मल मूतर, एक चॉम एक गुदा।
एक जोति थै सब उतपना, कौन बाह्मन कौन सूदा।।[31]

सामान्यतः संत कवियों ने सरल, सहज और स्वाभाविक भाषा का प्रयोग किया है। वस्तुतः इन कवियों का मुख्य उद्देश्य था अपने विचारों को सामान्य जनता तक पहुँचाना। इसलिए उन्होने ऐसी भाषा का प्रयोग किया जिसे सामान्य जनता समझ सकें। संत कवि कबीर की भाषा के संबंध में पं0 हजारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है– ''भाषा पर कबीर का जबर्दस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है, उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है – बन गया है तो सीधे–सीधे नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार–सी नजर आती है। उसमें मानों ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवाह पक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सकें।''[32] संत कवियों की भाषा में हिन्दी की विभिन्न बोलियों के अरबी, फारसी के शब्द मिलते है। संतकवियों की भाषा को 'खिचड़ी भाषा' 'संधा भाषा' और सधुक्कड़ी भाषा कहा जाता है। विदित है कि संत काावियों का लक्ष्य काव्य रचना नहीं था। उनके काव्यों में सामान्य जनता के हित और उनके उद्‌बोधन की भावना सन्निहित है। भावों की स्पष्टीकरण के लिए इन कवियों ने प्रतीकों, उपमानों और रूपकों की योजना की है। भावों के प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करने के प्रयत्न में अलंकार स्वतः आ गए है। कबीर काव्य में रूपक का उदाहरण द्रष्टव्य है –

(कबीर) माया दीपक नर पतंग, भ्रमि–भ्रमि इवै पड़ंत।
कहै कबीर गुन ग्यान थैं एक आध उबरंत।।[33]

संत कवियों ने अपने काव्य में जानबुझकर रसों की सृष्टि नहीं की है अपितु भावों की अभिव्यक्ति में स्वाभाविक रूप से काव्य में रसों का समावेश हो गया है। इनके काव्य में श्रृंगार रस के संयोग और वियोग दोनों पक्षों की अभिव्यक्ति हुई है। जहाँ

परमात्मा के विराट रूप का वर्णन है वहाँ अद्‌भुत रस दृष्टिगोचर होता है। संत कवियों के काव्य में शांत रस प्रमुख है। ''इनके काव्य में मुख्यतः गेय–मुक्तक शैली का प्रयोग हुआ है। गीतिकाव्य के पॉचों प्रमुख तत्वों– (1) भावात्मक (2) वैयक्तिकता (3) संगीतात्मकता (4) सूक्ष्मता और (5) भाषा की कोमलता इनके काव्य में मिलते है। किन्तु कही–कही उपदेश परक पदों में भावात्मकता का स्थान बौद्धिक्ता ने ग्रहण कर लिया है। अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम इन्होंने लोक प्रचलित भाषा को ही बनाया।.... इसका कारण केवल संस्कृत को कूप जल एवं भाषा को बहता नीर समझना ही नहीं, अपितु स्वयं उनका तथा उनके शिष्यों की अशिक्षा के कारण और किसी साहित्यिक भाषा का प्रयोग करने की असमर्थता भी थी। प्रदेश–भेद के अनुसार विभिन्न कवियों ने प्रारंभिक खड़ीबोली, राजस्थानी, पूर्वी पंजावी प्रभावित ब्रज एवं विशुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। यद्यपि जानबूझकर अपनी भाषा को आलंकारिकता से लादने का प्रयत्न इन्होंने नहीं किया, किन्तु अनुभूति की तीव्रता के कारण इनकी अभिव्यक्ति में अलंकार, रीति एवं ध्वनि से सम्बंधित विभिन्न तत्वों का समावेश स्वतः ही हो गया है।''[34]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अन्य संत कवियों की भॉति कबीर का काव्य भी सहज, सरल और सुबोध जनभाषा में मिलता है। किन्तु कबीर के काव्य में स्पष्टता और प्रभावशीलता अधिक है। रूढियों और आडम्बरों की निन्दा की है। इन संत कवियों की भक्ति व्यक्तिगत होते हुए भी सामाजिक उत्थान एवं कल्याण की भावना से ओतप्रोत है। किन्तु कबीर के काव्य में धार्मिक पाखण्डों एवं सामाजिक कुरीतियों को दूर करने की अर्पूव शक्ति है। कबीर की कविता मानवतावाद का पोषक, प्राणिमात्र में प्रेम का संचार करने वाला है। कबीर एक महान भक्त, उच्चकोटि के समाजसुधारक एंव हिन्दी संत काव्य के प्रतिनिधि कवि है। और उनकी कविता संतकाव्यधारा का सर्वश्रेष्ठ और अमुल्य निधि है।

संदर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. गणपतिचन्द्र गुप्त– साहित्यिक निबंध, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद 2015, पृष्ठ 251

2.वही, पृष्ठ 251

3.सं.डां. टी. निर्मला, डॉ. एस. मोहन–पद्य मंजरी, राजकमल प्रकाशन प्रा0लि0 नई दिल्ली, 2005 पृष्ठ–29

4.सं. डॉ0 नगेन्द्र–हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरवैक्स नोएडा 2005, पृष्ठ 121

5.वही, पृष्ठ 121

6.डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना – हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा 2009, पृष्ठ 71

7.वही, पृष्ठ 71

8.रामचन्द्र तिवारी–कबीर–मीमांसा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2007, पृष्ठ 61

9.वही, पृष्ठ 61

10.सं0 डॉ0 नगेन्द्र–हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 122

11.गणपतिचन्द्र गुप्त – साहित्यिक निबंध, पृष्ठ 259–260

12.वही, पृष्ठ 260

13.वही, पृष्ठ 260

14.सं0 डॉ0 नगेन्द्र–हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 126

15.डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना – हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि, पृष्ठ 72

16.रामचन्द्र तिवारी–कबीर–मीमांसा, पृष्ठ 17

17.वही, पृष्ठ 61

18.वही, पृष्ठ 92

19.वही, पृष्ठ 102

20.वही, पृष्ठ 164

21.वही, पृष्ठ 104

22.वही, पृष्ठ 167

23.वही, पृष्ठ 61

24.काशिका, संयुक्तांक 8,9,10 (जनवरी 2014 जून 2015) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पृष्ठ 16,17

25.रामचन्द्र तिवारी – कबीर मीमांसा, पृष्ठ 62

26.वही, पृष्ठ 62

27.वही, पृष्ठ 63

28.वही, पृष्ठ 63

29.वही, पृष्ठ 92

30.वही, पृष्ठ 59

31.वही, पृष्ठ 59

32. वही, पृष्ठ 139, 140

33.वही, पृष्ठ 133

34.गणपति चन्द्र गुप्त – साहित्यिक निबंध, पृष्ठ–262